*दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता - पूर्ण क्षमता प्राप्त करने की दिशा में**

शक्तिकान्त दास

सेंटर फॉर एडवांस्ड फाइनेंशियल रिसर्च एंड लर्निंग (सीएएफआरएएल) द्वारा दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, 2016 पर आयोजित इस सम्मेलन में आकर मुझे बहुत खुशी हो रही है। मैं इस पहल के लिए 'कैफराल' को बधाई देता हूं और मुझे इस कार्यक्रम में आमंत्रित करने के लिए उन्हें धन्यवाद देता हूं।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर शोधन अक्षमता कानून अक्षम कंपनियों में बंधी पूंजी को पुन: उपयोग में लाने के लिए एक माध्यम उपलब्ध कराने और अन्य उत्पादक उद्देश्यों में इस पूंजी को उपयोग में लाने के एक बड़े सार्वजनिक उद्देश्य की पूर्ति करते हैं। दिवालियापन कानून अर्थव्यवस्था में उद्यमिता को बढ़ावा देते हैं; वे संकटग्रस्त उधारकर्ताओं को लेनदारों के साथ अपने ऋण पर फिर से बातचीत करने का माध्यम भी प्रदान करते हैं; और लेनदारों को चूक होने पर उधारकर्ताओं पर अपने अधिकारों का प्रयोग करने का विकल्प देते हैं।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में, जैसा कि आप जानते होंगे, हमारे ऋण बाज़ारों पर बैंकों का प्रभुत्व है। बैंकों के दबावग्रस्त ऋण आम तौर पर उभर कर आए प्रत्याशित और अप्रत्याशित जोखिमों का परिणाम होता है। किंतु, जानबूझकर की गई चूक या धोखाधड़ी एक अलग श्रेणी है। आम तौर पर प्रणालीगत स्तर पर ऋण का अत्यधिक दबावग्रस्त हो जाने के कुछ कारण होते हैं, जैसे कि अत्यधिक लिवरेज, खराब अंडरराइटिंग, वितरण के बाद की ढीली निगरानी और वास्तविक अर्थव्यवस्था से उभरने वाले अन्य बाहरी आघात। हाल के आर्थिक जागतिक इतिहास से पता चलता है कि कैसे उक्त कारक विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में दबावग्रस्त ऋण के उच्च स्तर का कारण बने। भारतीय संदर्भ में भी, लगभग एक दशक पहले, दबावग्रस्त आस्तियों की लंबी सूची थी। दबावग्रस्त ऋण का उच्च स्तर पूंजी के दुरुपयोग, उधार देने में अरुचि और निवेश से बाहर होने के माध्यम से ऋण प्रणाली में बड़े प्रतिकूल परिणाम उत्पन्न करता है।

इस परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता, (आईबीसी) का अधिनियमन भारत के आर्थिक इतिहास में एक ऐतिहासिक सुधार रहा है। आईबीसी से पहले भारत में कानूनों ने अलग-अलग तरीकों से संकटग्रस्त फर्मों से निपटने के लिए संविधान के विधायी, कार्यकारी या न्यायिक साधनों का उपयोग किया था। इस पृष्ठभूमि में शोधन अक्षमता कानून सुधार समिति (बीएलआरसी)[1] ने दृढ़ता से राय दी कि चूककर्ता फर्म का उचित निराकरण एक व्यावसायिक निर्णय है और वह केवल लेनदारों को ही लेना चाहिए। इस सोच की परिणति के रूप में आईबीसी, जिस रूप में आज वह है, लेनदारों, जिन्हें चूककर्ता देनदार के खिलाफ शोधन अक्षमता कार्यवाही शुरू करने का अधिकार दिया गया है, द्वारा संचालित निराकरण तंत्र पर पर्याप्त जोर देती है। ऐसी प्रक्रिया से अधिक पारदर्शिता और जवाबदेही सुनिश्चित होती है।

ऋण पारितंत्र के एक बड़े हिस्से का विनियामक होने के नाते रिज़र्व बैंक आईबीसी के कार्यान्वयन में एक प्रमुख घटक रहा है। आरबीआई ने बड़े मूल्य वाले दबावग्रस्त खातों के समाधान पर ध्यान केंद्रित करते हुए आईबीसी में शामिल कई उपाय किए हैं। आरबीआई को बड़ी और काफी समय से दबावग्रस्त रही आस्तियों के समाधान के लिए प्राथमिक उपाय के रूप में आईबीसी का प्रयोग करने में एक स्पष्ट भूमिका प्रदान की गई थी। बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949 में 2017 में किए गए संशोधन के माध्यम से एक खंड शामिल किया गया, जो रिज़र्व बैंक को आईबीसी के प्रावधानों के तहत किसी भी चूक के संबंध में कॉरपोरेट दिवालियापन समाधान प्रक्रिया (सीआईआरपी) शुरू करने के लिए किसी भी बैंक को निर्देश जारी करने के लिए प्राधिकृत करता है। तदनुसार, इन शक्तियों

---

* श्री शक्तिकान्त दास, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा सेंटर फॉर एडवांस्ड फाइनेंशियल लर्निंग (कैफराल), मुंबई द्वारा आयोजित सम्मेलन में दबावग्रस्त आस्तियों के समाधान तथा दिवाला और शोधन अक्षमता संहिता (आईबीसी) पर 11 जनवरी 2024 को दिया का मुख्य भाषण।

[1] दी रिपोर्ट ऑफ दी बैंकरप्टसी लॉ रिफॉर्म्स कमिटी (अध्यक्ष: डॉ. टी.के. विश्वनाथन) - खंड I: रेशनेल एंड डिजाइन, नवंबर 2015।

का प्रयोग उठाते हुए रिज़र्व बैंक ने चूक के 41 विशिष्ट मामलों में सीआईआरपी कार्यवाही शुरू करने के लिए निर्देश जारी किए[2]।

जहां तक न्यायालय के बाहर समाधान का सवाल है, विनियामक परिप्रेक्ष्य से आईबीसी का अन्य महत्वपूर्ण परिणाम अधिक सिद्धांत-आधारित दृष्टिकोण की ओर मुड़ना था। ऋणों के पुनर्गठन की सभी मौजूदा योजनाओं को रिज़र्व बैंक द्वारा 7 जून 2019 को जारी विवेकपूर्ण ढांचे के तहत समाधान के लिए एक सरल और सामंजस्यपूर्ण ढांचे द्वारा प्रतिस्थापित किया गया। इस सामंजस्यपूर्ण ढांचे ने ऋणदाताओं को चूककर्ता उधारकर्ताओं के संबंध में वाणिज्यिक व्यवहार्यता का मूल्यांकन करते हुए समाधान योजनाओं की रूपरेखा तैयार करने और उसे लागू करने के लिए अधिकार प्रदान किया। समाधान योजना में आईबीसी के तहत सीआईआरपी आवेदन दाखिल करना भी शामिल है। बड़े मूल्य वाले उधारकर्ताओं के संबंध में, अर्थात, जहां बैंकों का कुल एक्सपोजर ₹1500 करोड़ से अधिक है, समाधान योजनाओं के विलंबित कार्यान्वयन के लिए अतिरिक्त प्रावधानों के रूप में हतोत्साहन निर्धारित किया गया। इनमें से कई खातों का आईबीसी के तहत समाधान किया जा चुका है।

आईबीसी के कार्यान्वयन का जायजा

यदि हमें आईबीसी की कार्यान्वयन यात्रा और इसके अब तक के प्रभाव का जायजा लें, तो इससे कई महत्वपूर्ण सकारात्मक संकेत और सीख मिली है जो कुछ सुधार की मांग करते हैं। पहले मैं (i) समाधान की प्रकृति के संदर्भ में; (ii) मूल्य की प्राप्ति के संदर्भ में; और (iii) व्यवहारिक बदलाव के संदर्भ में सकारात्मक पहलुओं पर प्रकाश डालना चाहूंगा।

समाधान की प्रकृति के संदर्भ में : इसकी स्थापना के बाद से 7,058 कॉरपोरेट देनदार (सीडी)[3] को सीआईआरपी में शामिल किया गया, जिनमें से 5,057 मामले बंद कर दिए गए और 2,001 कॉरपोरेट देनदार समाधान के विभिन्न चरणों में हैं। जो मामले बंद कर दिए गए हैं उनमें से लगभग 16 प्रतिशत में सफल समाधान योजनाएँ बनाई जा सकीं; 19 प्रतिशत को आईबीसी की धारा 12ए के तहत वापस ले लिया गया, जहां बड़े पैमाने पर देनदार ऋणदाताओं के साथ पूर्ण या आंशिक निपटान के लिए सहमत हुए; 21 प्रतिशत अपील या समीक्षा के पश्चात बंद कर दिए गए; और 44 प्रतिशत मामलों में परिसमापन आदेश पारित किए गए। सफल समाधान योजना वाले 16 प्रतिशत मामलों और निपटान के लिए सीडी पर सहमति वाले 19 प्रतिशत मामलों को एक साथ रखकर यह कहा जा सकता है कि कुल सीआईआरपी मामलों में से 35 प्रतिशत पर आईबीसी का सकारात्मक प्रभाव देखा गया।

आंकड़ों की बारीकी से जांच करने से पता चलता है कि परिसमापन में समाप्त होने वाले 77 प्रतिशत मामले या तो पहले के औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड (बीआईएफआर) वाली व्यवस्था से विरासत में मिले थे या वह पहले से ही ऐसी निष्क्रिय इकाइयां थीं कि उनके आईबीसी में दाखिल होने से पहले ही उनका काफी मूल्यक्षरण हो चुका था। वास्तव में, इस संहिता ने इन सभी विरासती मामलों को व्यवस्थित तरीके से सुलझाने का एक साधन उपलब्ध कराया है। इस बारे में और भी बताया जाए तो सफलतापूर्वक समाधान होने वाले 38 प्रतिशत सीआईआरपी मामले पहले बीआईएफआर के पास थे और/या निष्क्रिय थे। यदि आईबीसी न होती तो उनका भाग्य शायद अब तक अनिश्चित बना रहता।

आईबीबीआई द्वारा प्रकाशित आंकड़ों से पता चलता है कि सीआईआरपी मामलों की संख्या में वृद्धि हुई है जिसके परिणामस्वरूप समाधान के रूप में परिसमापन आदेशों का प्रतिशत वित्त वर्ष 2017-18 के दौरान के 21 प्रतिशत से बढ़कर वित्त वर्ष 2022-23 के दौरान 45 प्रतिशत हो गया है। यह आईबीसी के तहत समाधान विकल्प की ओर लगातार झुकाव को दर्शाता है और व्यवहार्य फर्मों के लिए एक उपयुक्त सांविधिक आश्रय संस्था के रूप में आईबीसी की बढ़ती स्वीकार्यता को उजागर करता है।

यहां तक कि वित्तीय जगत के अन्य क्षेत्रों, जैसे कि गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) जैसी संस्थाओं के लिए भी आईबीसी ने दबावग्रस्त संस्थाओं के समाधान के लिए एक प्रभावी उपाय उपलब्ध कराया है। मैं संहिता की धारा 227 का उल्लेख

[2] आरबीआई ने जून 2017 में बैंकों को उस समय गैर-निष्पादित आस्ति के रूप में वर्गीकृत 12 सबसे बड़े कॉरपोरेट देनदारों के खिलाफ आईबीसी के तहत दिवालिया कार्यवाही शुरू करने के निर्देश जारी किए थे। इसके बाद अगस्त 2017 में निर्देशों की दूसरी सूची जारी की गई, जिसमें बैंकों को 13 दिसंबर 2017 तक 29 अन्य दबावग्रस्त कॉरपोरेट देनदारों के संबंध में समाधान योजनाओं को लागू करने की आवश्यकता थी, अन्यथा उनके खिलाफ दिवालिया कार्यवाही शुरू की जानी थी।

[3] जुलाई-सितंबर 2023 के आईबीबीआई त्रैमासिक न्यूज़लेटर से संकलित डेटा।

कर रहा हूं, जिसे 2019 में कुछ 'वित्तीय सेवा प्रदाताओं' के समाधान के लिए एक अलग अधिसूचना के माध्यम से क्रियान्वित किया गया था[4]। हाल के दिनों में कुछ प्रमुख दबावग्रस्त एनबीएफसी के समाधान के लिए आरबीआई ने समग्र वित्तीय प्रणाली में न्यूनतम व्यवधान के साथ इस तंत्र का उपयोग किया है।

मूल्य की प्राप्ति के संदर्भ में; सितंबर 2023 तक लेनदारों को ₹9.92 लाख करोड़ मूल्य के दाखिल दावों में से ₹3.16 लाख करोड़ की वसूली हुई है जो 32 प्रतिशत की वसूली दर के बराबर है। यहां इस बात का उल्लेख करना जरूरी है कि आईबीसी के तहत दाखिल होने से पहले ही इन आस्तियों की काफी मूल्य हानि हुई होगी। इसके अलावा, दाखिल दावों के साथ वसूली की तुलना करना समाधान प्रक्रिया की प्रभावशीलता का उचित संकेतक नहीं हो सकती। इसके बजाय, समाधान मूल्य की तुलना दबावग्रस्त आस्तियों के परिसमापन मूल्य या आईबीसी में दाखिल किए जाने के समय उसका जो उचित मूल्य हो उससे की जा सकती है। जब इन दो मापदंडों, अर्थात् परिसमापन मूल्य और उचित मूल्य, को विचार में लेते हुए मूल्यांकन किया जाए तो वसूली दर क्रमशः 169 प्रतिशत और 86 प्रतिशत है जो काफी उत्साहजनक प्रतीत होती है।

व्यवहारिक बदलाव के संदर्भ में: आईबीसी का सबसे बेहतर परिणाम इस संहिता द्वारा लाया गया पर्याप्त व्यवहारिक बदलाव है। यह ₹9.33 लाख करोड़ मूल्य के अंतर्निहित चूक वाले सीआईआरपी कार्रवाई के लिए प्राप्त कुल 26,518 आवेदनों से स्पष्ट है, जिन्हें अगस्त 2023 तक दाखिल किए जाने से पहले वापस ले लिया गया था। इस संहिता द्वारा निर्मित 'दिवालियापन के खतरे' की विश्वसनीय धारणा ने लेनदारों की बातचीत की शक्तियों को मजबूत किया है। इसके अभाव में बहुत अधिक संभावना है कि चूक के मामले अधिक समय तक बने रहते, जिसके परिणामस्वरूप मूल्य की हानि होती। यहां यह कहना जरूरी है कि आईबीसी को केवल ऋण वसूली साधन के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए बल्कि इसे एक ऐसे साधन के रूप में देखा जाना चाहिए जो अव्यवहार्य व्यवसायों में फंसी पूंजी के प्रभावी समाधान या उनको उपयोग के लिए उपलब्ध करा कर आस्तियों के आर्थिक मूल्य के संरक्षण की सुविधा प्रदान करता हो।

चुनौतियाँ और आगे का रास्ता

यदि संहिता के कार्यान्वयन के बारे में सब कुछ अच्छा है, तो आलोचना कहाँ से हो रही है? सामान्य तौर पर, आईबीसी की आलोचना दो मोर्चों पर होती है - समाधान में लगने वाला समय और दाखिल दावों की तुलना में कटौती राशि (हेअरकट) की सीमा। मैं कटौती राशि वाले भाग पर अपने दृष्टिकोण पहले ही साझा कर चुका हूँ। अब मैं विलंब वाले भाग पर कुछ विचार साझा करना चाहता हूँ।

इस संहिता में एक समयबद्ध प्रक्रिया की परिकल्पना की गई है जिसके तहत 180 दिनों के भीतर सीआईआरपी प्रक्रिया को पूरा किया जाना आवश्यक है। असाधारण परिस्थितियों में 90 दिनों तक का एकमुश्त विस्तार दिया जा सकता है। हालाँकि, आईबीबीआई[5] द्वारा प्रकाशित आकड़े कुछ गंभीर चिंताएँ पैदा करता है। सितंबर 2023 तक कार्यवाही अधीन सीआईआरपी मामलों में से 67 प्रतिशत पहले ही 270 दिनों की कुल समय सीमा को पार कर चुके हैं जिसमें 90 दिनों की संभव विस्तार अवधि भी शामिल है। अधिक चिंताजनक तथ्य यह है कि वित्त वर्ष 2020-21 और वित्त वर्ष 2021-22 के दौरान किसी मामले को दाखलि करने में लगने वाला औसत समय क्रमशः 468 दिन और 650 दिन था। इतनी ज्यादा देरी से आस्तियों का मूल्य काफी हद तक कम हो जाएगा। इसके कई कारण हैं, जैसे कि, संहिता में हो रहे न्यायिक बदलाव; कुछ कॉरपोरेट देनदारों द्वारा अपनाई गई मुकदमेबाजी की रणनीति; लेनदारों के बीच प्रभावी समन्वय की कमी; न्यायिक बुनियादी ढांचे में बाधाएं आदि। मैं इनमें से कुछ मुद्दों और आगे के संभावित मार्ग पर विचार के साथ बात करना चाहूंगा। मेरे पास कहने के लिए चार विशिष्ट बिंदु हैं।

(ए) लेनदारों और कॉरपोरेट देनदारों के बीच संव्यवहार को पुनः व्यवस्थित करना

सीआईआरपी अवधि के दौरान आईबीसी समाधान पेशेवर के माध्यम से कॉरपोरेट देनदारों का पूर्ण नियंत्रण लेनदारों को

[4] आईबीसी की धारा 227 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए सरकार ने दिनांक 18 नवंबर 2019 की अधिसूचना एसओ. 4139(ई) जारी की जिससे आईबीसी के प्रावधानों के तहत ₹500 करोड़ या उससे अधिक की आस्ति आकार वाली गैर-बैंकिंग वित्त कंपनियों (आवास वित्त कंपनियों सहित) के समाधान के लिए कार्यवाही की जा सकती है।

[5] भारतीय दिवाला और शोधन अक्षमता बोर्ड (आईबीबीआई) आईबीसी के तहत स्थापित विनियामक है और संहिता के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है।

हस्तांतरित करता है। ऐसा इसलिए किया जाता है ताकि समाधान प्रक्रिया के दौरान मूल्य के किसी भी क्षरण को रोका जा सके। कई मामलों में व्यवसाय पर अपने नियंत्रण को जाते देख देनदारों के प्रवर्तकों को विभिन्न मुकदमेबाजी का सहारा लेते हुए हमने देखा है। हालांकि कुछ मामले वास्तविक हो सकते हैं, लेकिन बाजार में अन्य प्रकार के इरादे भी दिखाई देते हैं। इस संघर्ष को कम करने के लिए पूर्व नियोजित समझौते (प्रीपैक) को अपनाने की दिशा में एक संस्थागत प्रयास किया गया है जो अनिवार्य रूप से एक देनदार-कब्जे वाला (डेटर इन पजेशन) मॉडल है। विश्व स्तर पर प्री-पैक सांविधिक हस्तक्षेप के बिना व्यवस्थित रूप से विकसित हुए हैं, क्योंकि उन देशों में दिवाला स्थिति सामान्य हो गई है। ऐसे पूर्वानुमानित परिदृश्यों में न्यायपालिका की भूमिका सीमित हो जाती है क्योंकि न्यायालय आम तौर पर निर्धारित सिद्धांतों के अनुपालन की पुष्टि करने के बाद समाधान योजनाओं को मंजूरी देते हैं।

भारतीय संदर्भ में इसकी शुरुआत करने की दृष्टि से एमएसएमई के लिए प्री-पैकेज्ड इन्सॉल्वेंसी रिजॉल्यूशन प्रोसेस (पीपीआईआरपी) शुरू की गई है। हालाँकि इसे उतना अपनाया नहीं गया जितनी अपेक्षा थी। इसका एक कारण इस तंत्र के तहत प्रस्तावों को मंजूरी देने में हेअरकट का स्वैच्छिक होना है जिससे वित्तीय ऋणदाताओं (एफसी) को झिझक हो सकती। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि पीपीआईआरपी प्रवर्तकों को ऋणदाताओं के साथ रचनात्मक रूप से जुड़ने के लिए लाभकारी होगा, संभवतः किसी चूक की घटना के घटित होने से पहले भी यह हो सकता है। इससे अनावश्यक प्रतिकूल मुकदमों से बचने के साथ त्वरित और सहज समाधान की सुविधा मिलेगी। कुल मिलाकर, यह लेनदारों और देनदारों, दोनों के लिए फायदे की स्थिति हो सकती है। एक बार यह धारणा स्थापित हो जाए और इसके लिए सांविधिक व्यवस्था कर दी जाए तो बड़े कॉरपोरेट देनदारों के लिए भी इस तंत्र की अधिक स्वीकार्यता हो सकती है। अत:, लेनदार और देनदार, अपने हित में, विवेकपूर्ण रूप से यथार्थवादी लागत-लाभ मूल्यांकन के आधार पर लागू परिदृश्यों में पीपीआईआरपी को अपनाने पर विचार कर सकते हैं।

भारतीय रिज़र्व बैंक न्यायालय के बाहर किए जाने वाले समाधान ढांचे की सीमाओं से परिचित है। इसमें विशेष रूप से समन्वय के मुद्दे हैं क्योंकि म्यूचुअल फंड, बीमा कंपनी और अन्य बांड/डिबेंचर धारक जैसी संस्थाएं ऋणदाता जगत का एक बड़ा हिस्सा हैं जो दबावग्रस्त आस्ति के समाधान के लिए हमारे विवेकपूर्ण ढांचे के दायरे से बाहर हैं। इसलिए हमारे विवेकपूर्ण ढांचे के तहत विचार किए गए न्यायालय के बाहर के निपटानों को आईबीसी के साथ प्रभावी ढंग से जोड़ने में हमारी विशेष रुचि है। इस संबंध में पीपीआईआरपी एक संभावित महत्वपूर्ण साधन बन सकता है।

(बी) वित्तीय ऋणदाता की भूमिका की पुनः पुष्टि करना

संहिता के कार्यान्वयन के पिछले सात वर्षों के दौरान ऋणदाता समिति (सीओसी) की भूमिका के न्यायिक आधार में परिवर्तन हुआ है। एक विश्वस्त के रूप में सभी हितधारकों के हितों की रक्षा करने की जिम्मेदारी सीओसी की है। संहिता की सफलता समाधान प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में सीओसी की सक्रिय भागीदारी से जुड़ी है। हालाँकि, कई अवसरों पर निर्णायक प्राधिकारियों (एए) ने दिवाला कार्यवाही में सीओसी के आचरण के संबंध में चिंताएँ उठाई हैं। इसमें सीओसी बैठकों में सहभागिता की कमी; लेनदारों के बीच जुड़ाव या प्रभावी समन्वय की कमी; समाधान योजनाओं की रूपरेखा तैयार करते समय लेनदारों के सामूहिक हित के बजाय उनके व्यक्तिगत हित को असंगत प्राथमिकता देना जो स्वयं समाधान योजना के लिए हानिकारक हो सकता है, आदि शामिल है।

सीओसी की इन कमियों को देखते हुए हाल के वर्षों में संहिता के तहत वित्तीय ऋणदाताओं (एफसी) के साथ परिचालन ऋणदाताओं (ओसी) के अधिकारों को संतुलित करने प्रवृत्ति दिखाई देती है। हालांकि सभी हितधारकों के बीच समानता सुनिश्चित करने पर ध्यान दिया जाना एक आदर्श स्थिति होगी, लेकिन शुरुआत में अवशोषित जोखिम के स्तर के आधार पर विभिन्न श्रेणी के लेनदारों के लिए दिए गए भारांक में कुछ अंतर होना चाहिए। यह मानना होगा कि वित्तीय ऋणदाता अधिकतम जोखिम उठाते हैं और इसलिए उनके जोखिम को प्राथमिकता के साथ और आनुपातिक रूप से मुआवजा दिया जाना चाहिए। तदनुसार, इस संहिता और उसके क्रमिक परिवर्तन में कोई भी संशोधन व्यापक तरीके से वित्तीय ऋणदाता प्राथमिकता वाले समाधान ढांचे पर जोर देते हुए जारी रखा जाना चाहिए।

(सी) समूह दिवाला तंत्र की परिकल्पना

हालांकि दिवालिया तंत्र विभिन्न ठोस उपायों के माध्यम से स्थिरता के क्षेत्र की ओर बढ़ रहा है, समूह दिवालियापन के लिए किसी स्पष्ट ढांचे का न होना एक बड़ी बाधा है। विश्व स्तर पर समूह दिवाला के दो विविध पहलू हैं। कुछ क्षेत्राधिकारों ने प्रक्रियात्मक समन्वय को अपनाया है तो कुछ ने समस्त समेकन (सब्सटेंशिव कन्सॉलिडेशन) को। समस्त समेकन किसी एक समूह के भीतर कई संस्थाओं की आस्तियों, देनदारियों और संचालन के समेकन से संबंधित है, भले ही उनका संस्थागत स्थान कानूनी रूप से कुछ भी हो। दूसरी ओर प्रक्रियात्मक समन्वय के तहत दर्ज किए जाने की आवश्यकताओं, समयसीमा, समन्वय इत्यादि जैसे प्रक्रियात्मक पहलुओं को संरेखित करने तक ही दृष्टिकोण सीमित है। इसमें संस्थाओं के मामलों को प्रक्रिया के तहत एक साथ मिलाया नहीं जाता।

भारत में समूह दिवालिया तंत्र के लिए कोई निर्दिष्ट ढांचा नहीं है इसलिए यह तंत्र न्यायालयों के मार्गदर्शन में काम रहा है। शायद विधायी परिवर्तनों के माध्यम से इस संबंध में उचित सिद्धांत निर्धारित करने का समय अब आ गया है। पिछले कुछ समय से नीति संबंधित समूहों में इस मुद्दे पर काफी मंथन चल रहा है। अब इसे उचित कानूनी परिवर्तनों के माध्यम से आगे बढ़ाना है।

हालांकि कोई भी कानूनी ढांचा वास्तविक दुनिया के सभी मुमकिन परिदृश्यों की परिकल्पना नहीं कर सकता है, फिर भी सीमा पार संबंधों सहित जमीनी स्तर पर जटिल समूह संरचनाओं को देखते हुए औपचारिक रूप से शुरू करने के लिए एक ढांचे की कल्पना करना एक उचित कदम हो सकता है। इस प्रयास में आस्तियों का मिश्रण, 'समूह' की परिभाषा तैयार करना, सीमा पार मुद्दों का निपटान आदि जैसी चुनौतियाँ होंगी। तथापि इसे एक अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए और समूह दिवालियापन के लिए एक व्यावहारिक ढांचा तैयार किया जाना चाहिए।

(डी) दबावग्रस्त आस्तियों के लिए एक सक्रिय द्वितीयक बाजार विकसित करना

एक सफल समाधान योजना को लागू करने में एक बड़ी बाधा यह है कि देश में दबावग्रस्त आस्तियों के लिए कोई सक्रिय बाजार नहीं है। इस वजह से आईबीसी के तहत आने वाली दबावग्रस्त आस्तियों के लिए संभावित समाधान मामलों की संख्या काफी सीमित हो जाती है। वास्तव में यह हमारी विनियमित संस्थाओं पर भी लागू होता है जब वे अपनी दबावग्रस्त आस्तियों को आईबीसी प्रक्रिया से इतर माध्यम से अंतरित करते हैं। ऋण क्षेत्र में एक मजबूत द्वितीयक बाज़ार उपलब्ध होने से ऋण देने वाली संस्थाओं द्वारा ऋण एक्सपोज़र के प्रबंधन के लिए एक महत्वपूर्ण तंत्र उपलब्ध हो सकता है।

इसी उद्देश्य से रिज़र्व बैंक द्वारा कुछ उपाय किये गये हैं। ऋण एक्सपोजर के हस्तांतरण पर 24 सितंबर 2021 को जारी मास्टर दिशानिर्देश बैंकों, एनबीएफसी और अखिल भारतीय वित्तीय संस्थानों (एआईएफआई) द्वारा ऋण एक्सपोजर के हस्तांतरण के लिए एक व्यापक विनियामक ढांचा उपलब्ध कराते हैं। विशेष रूप से, बाजार सहभागियों के व्यापक समूह को, निर्दिष्ट शर्तों के अधीन, दबावग्रस्त ऋण एक्सपोजर के हस्तांतरण के लिए एक सक्षम ढांचा तैयार किया गया है। हम वर्तमान में दबावग्रस्त आस्तियों के प्रतिभूतिकरण के लिए एक रूपरेखा तैयार करने की प्रक्रिया में हैं जिसके लिए जनवरी 2023 में एक चर्चा पत्र जारी किया गया है।

संस्थागत दृष्टिकोण से रिज़र्व बैंक ने एक स्व-विनियामक निकाय – अर्थात सेकेंडरी लोन मार्केट एसोसिएशन (एसएलएमए) स्थापित करने के लिए प्रमुख बैंकों का एक कोर समूह बनाया है। स्व-विनियामक निकाय से अपेक्षा है कि वह दस्तावेज़ीकरण और बाज़ार प्रथाओं के मानकीकरण; बाज़ार के बुनियादी ढांचे की स्थापना; व्यापक विनियामक उद्देश्यों के अनुरूप द्वितीयक बाजार की तरलता, दक्षता और विकास को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाए।

इन उपायों से बैंकिंग क्षेत्र में उत्पन्न होने वाले ऋण जोखिम के हस्तांतरण की सुविधा मिलने और निवेशकों के विविध समूह के लिए बाजार-आधारित ऋण उत्पाद सुनिश्चित होने की उम्मीद है। निस्संदेह, एक सक्रिय द्वितीयक बाजार पारितंत्र की कल्पना आईबीसी तंत्र के लिए लाभकारी साबित होगी।

निष्कर्ष

मैंने जिन बातों को रखा है उसके अलावा कई अन्य पहलू भी हैं जिन पर ध्यान दिया जाना चाहिए मामलों के निपटान को बेहतर

बनाने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग, न्यायिक बुनियादी ढांचे को मजबूत करना, नियमित रूप से हितधारक जागरूकता कार्यक्रम और इसी तरह के अन्य कार्य शामिल हैं। रिज़र्व बैंक की ओर से हम संभावित समाधानों तक पहुंचने के लिए उभरती चुनौतियों पर हितधारकों की विचार प्रक्रिया को समझने के लिए उनके साथ लगातार बातचीत कर रहे हैं।

बैंकिंग क्षेत्र की आस्ति गुणवत्ता में हालिया/लगातार सुधार का श्रेय आईबीसी की शुरूआत सहित कई कारकों को दिया जा सकता है। कोई भी कानून तभी अच्छा होता है जब उसका कार्यान्वयन भी उतना ही अच्छा हो। रिज़र्व बैंक आईबीसी पारितंत्र के व्यवस्थित और निरंतर विकास पर ध्यान केंद्रित करना जारी रखेगा।

धैर्यपूर्वक मेरी बात सुनने के लिए मैं आप सभी को धन्यवाद देता हूँ।

धन्यवाद। नमस्कार!